कसूर किसका ?

रजनी मोरवाल

कसूर किसका?

https://www.hindiadda.com/kasoor-kisaka/

अब तुम बड़ी हो गई हो, दुपट्टा ओढ़ लिया करो, इतनी जोर से क्यों हँसती हो? सब पलट कर देखने लगते हैं, बातें करते समय हाथ ना नचाया करो, भला अच्छे घरों की लड़कियों को ये सब शोभा देता है? शाम को अँधेरा होने से पहले-पहल घर आ जाया करो, याद रखो नजरें हमेशा ही नीची रहें वर्ना... हाँ-हाँ, मैं अभ्यस्त हो चुकी हूँ इन सब हिदायतों की, अब तो यह लगता है कि अगर इन साँकलों से मुझे आजाद कर भी दोगे, तब भी मैं जी नहीं पाऊँगी। क्योंकि मेरा वजूद तो तुमने कभी पनपने ही नहीं दिया।

मैं सदियों से इस जकड़न की आदी हो चुकी हूँ और जाने-अनजाने, मैंने इसे ही अपना ढाल बना लिया है या यूँ समझ लो कि घर की चार दिवारी से बाहर निकलने का यही एकमात्र उपाय था मेरे पास।

किंतु एक बात मैं समझ नहीं पाती, न मैं जोर से हँसती हूँ, न हाथ नचाकर बातें ही करती हूँ फिर भी लोग क्यों मुझे देखते हैं? ढलता हुआ सूरज तो हमेशा मुझे घर के आँगन में ही बैठकर देखना भाता है और तो और दुपट्टा तो बचपन ही से मुझसे लिपट गया था जब इसकी जरूरत भी मेरे तन को महसूस नहीं होती थी। फिर क्यों मौका देखते ही मुझे मसोस दिया जाता है? आए दिन सारे अखबार बलात्कार और कत्ल की घटनाओं से लथपथ रहते हैं।

आखिरकार आज बता ही दो, छह माह की मासूम बच्ची को दुपट्टे की क्या जरूरत है? और तो और अस्सी बरस की महिला के दुपट्टे के भीतर क्या तलाशते हो तुम? क्यों ना कुछेक नियम तुम अपने लिए भी बना लो? कम से कम अपनी आँख में शर्म का पानी ही बचाकर रख लो, जिससे तुम्हें शायद यह याद रह सके कि मैं माँ, बहन और बेटी हूँ उफ्फ... सब भूल जाते हो तुम...।

क्या इस समाज में औरतों को जीने का हक नहीं है? उस लड़की का क्या कसूर था जिसके भीतर पाँच मीटर की रॉड घुसा दी गई? आखिर उस दस माह की बच्ची का क्या कसूर था जिसके अंगों को लोहे के स्केल से छलनी कर दिया गया? कहिए किसका? मैं आप से पूछती हूँ, आप से... आप से... आप से...! अगर इनमें से कोई आप की बेटी होती तब भी क्या आप इसी तरह टी.वी. के सामने मौन बैठे होते? क्या तब भी आप इस घटना को सिर्फ एक खबर की तरह देख रहे होते? उस लड़की का सोचिए जो अब सारी जिंदगी माँ नहीं बन पाएगी... अव्वल तो वह जीवित ही नहीं बच पाएगी अगर बच भी गई तो सारी जिंदगी अस्पतालों के चक्कर काट-काट कर दम तोड़ देगी। तो रहिए न बेखबर और आवाज उठाइए... नीतू ने घबरा कर हथेलियों से

अपने दोनों कानों को बंद कर लिया और हिलक-हिलक कर रोने लगी। पूरे कमरे में टी.वी. एंकर की जोशीली ललकार गूँज रही थी।

अचानक किसी काम से विक्रम का आना उस कमरे में हुआ, उसने नीतू को इस हालत में देखा तो घबरा गया। सबसे पहले उसने रीमोट कंट्रोल ढूँढ़कर टी.वी. का वॉल्यूम धीमे किया फिर बिलखती हुई नीतू को आगोश में लेकर ढाँढ़स बँधाने लगा। नीतू कमजोर मन की है यह बात उसे पहले से ही ज्ञात थी, सिनेमा देखते हुए भी किसी इमोशनल सीन पर अक्सर नीतू सुबकने लगती है। विक्रम ने नीतू को चुप कराते हुए कहा कि इस तरह की खबरें वह न देखा करे।

वह नीतू को सांत्वना देने लगा कि "देश में होने वाली इस तरह की घटनाओं से हर भारतीय का दिल दहल जाता है, हम सब कहीं न कहीं अपने आप को जिम्मेदार मानने लगते हैं। सबसे ज्यादा तो मन तब द्रवित होता है जब इस लचर कानून व्यवस्था के आगे कुछ न कर पाने की मजबूरी हमको सालती है। हर नागरिक देश की इस बिगड़ती छवि से परेशान है... हर व्यक्ति इंडिया-गेट पर कैंडल-मार्च में हिस्सा लेकर अपने आप को इस मुहीम का हिस्सा समझने लगता है। खून तो हर नागरिक का खौलता है। कुछ लोग अपने एहसास जज्ब कर लेते हैं तो कुछ नीतू की तरह रिएक्ट करते हैं।" विक्रम के सीने से लगी नीतू काफी देर बाद अपने आपे में लौटी।

पिछले चार बरसों से नीतू और विक्रम अलग-अलग राज्यों में अप-डाउन कर रहे हैं। मुंबई विक्रम का ठिकाना बना हुआ है तो नीतू बच्चों की पढ़ाई की खातिर दिल्ली में डेरा जमाकर बैठी है। विक्रम पूरा दिन ऑफिस में रहता है तो उसकी अनुपस्थिति में इन दिनों नीतू उस घर में अकेली रह जाती है। अभी एक सप्ताह ही तो हुआ है उसे मुंबई आए हुए। कहीं घूमना भी नहीं हो पाया था कि बलात्कार की इस निर्मम घटना ने देश को झकझोर कर रख दिया। अंतर्मन को हिला देने वाली इस त्रासदी को मीडिया की इतनी कवरेज मिली कि संसद तक में सरकार को सवाल-जवाब का सामना करना पड़ रहा था। इस खबर ने पूरे देश को एक सूत्र में बाँध दिया था, जागृति की लहर पूरे देश में दौड़ गई थी।

पुराने समय में भी ऐसी परिस्थितियाँ उत्पन्न होती रही होंगी किंतु आम जनता तक इसकी प्रतिक्रिया कहाँ पहुँच पाती थी। दैनिक अखबारों में कहीं छोटा-सा कॉलम भर दिया होता था, अखबार की पहुँच भी तब कितने घरों तक होती थी। आज के इस इलेक्ट्रॉनिक युग में इन चैनलों ने उत्पात मचा रखा है। सबसे तेज... आज तक... अभी-अभी... एक्सक्लुसिव रिपोर्ट के नाम पर घर-घर में हड़कंप मचा रखा है। चैनलों

में आपसी होड़ के चलते बस अपनी टी.आर.पी. बढ़ाने की पड़ी रहती है। कौन, कहाँ से और कैसे इन खबरों की कवरेज कर रहा है इसका लेखा-जोखा कौन रखे? सच्चाई दिखाने की मारामारी की एवज में क्रूरता व अश्लीलता का मापदंड भला कौन तय करे? जिस पर बीतती है वह व्यक्ति तो शर्मिंदा होता ही है पीड़ित को तो पग-पग पर समाज की प्रश्नवाचक दृष्टि का सामना करना ही पड़ता है परंतु घरों में बैठकर खबरें देखने-सुनने वाले भी द्रवित हुए बिना नहीं रह पाते।

नीतू एक भावुक स्त्री ठहरी उस पर भी एक माँ, वह भी एक जवान लड़की की। ऐसी भयानक खबरों से उसका दिल दहल उठता है, अपनी बेटी की सुरक्षा के प्रति उसका यूँ चिंतित हो उठना स्वाभाविक है। जब इस तरह के घृणित अपराधों के बाद टी.वी. पर बहसों का दौर चलता है तो कहीं कोई बाबा आकर कहता है कि "बलात्कार से बचने के लिए उस पीड़ित लड़की को अपने बचाव में उन बलात्कारियों से हाथ जोड़कर ये कहना चाहिए था कि "भैया मुझे छोड़ दो..." और इस तरह वह अपनी लाज बचा सकती थी साथ ही उन लड़कों को भी अपराधी बनने से रोक सकती थी।" हर कदम पर जिम्मेदारी सिर्फ स्त्री की ही है? नीतू गुस्से से लाल-पीली हो उठती है।

कहीं कोई समाज का ठेकेदार आकर कहता है कि "लड़कियों को अपने वस्त्रों का चुनाव ठीक से करना चाहिए, आधुनिक वस्त्र लड़कों को आमंत्रित करते हैं।" नीतू सोच में पड़ जाती है कि वह तो साड़ी पहन कर ऑफिस जाती है फिर भी उसे गाहे-बगाहे सहकर्मियों की नजरें यहाँ-वहाँ से शरीर को परखती दिख ही जाती हैं। अब इन बाबाओं, समाज के ठेकेदारों और स्वयंभू मसीहाओं को कौन समझाएँ कि कालिख तो देखने वालों की आँखों में पड़ी है, उसे साफ करने की जरूरत है। संस्कारों पर आ पड़ी धूल पोंछने की जरूरत है, समाज की भलाई चाहते हो तो बेहतर रहेगा जो तुम लोग मिलकर अंतर्मन की गंदगी हटाने का प्रयास करो।

विक्रम हमेशा नीतू से इसी बहस में उलझता रहता है कि वह अखबार या टी.वी में सिर्फ मार्मिक खबरों पर ही नजर रखती है। नीतू का कहना है कि एक जिम्मेदार नागरिक होने के नाते उनका फर्ज बनता है कि वह अगर कुछ कर न पाएँ तो कम से कम उन्हें अपने विचारों में सजगता तो बनाए रखनी चाहिए। कल ही की बात है बंगाल में एक सत्तर वर्षीय नन के साथ कुकर्म की खबर थी और गुजरात में एक छह वर्षीय बच्ची को बुरी तरह से जख्मी कर दिया गया था। कैसे संभव है कि नीतू रिएक्ट भी न करे? ऐसे अधिकतर मौकों पर विक्रम को ही चुप्पी साधनी पड़ती है क्योंकि इस तरह की घटनाओं से वह खुद भी अपनी अंतरात्मा को अक्सर घायल पाता है।

नीतू को इस मनःस्थिति से निकालने के लिए विक्रम ने रविवार को सारा दिन उसके साथ घूमने का प्लान बनाया। नीतू कई दिनों से "एलिफेंटा केव्स" देखना चाह रही थी। उस रोज छुट्टी होने की वजह से भीड़ कुछ ज्यादा ही थी। मुंबई में पर्यटकों की इतनी अधिक तादाद रहती है कि रेलवे स्टेशन, बाजार, बीच, गार्डन्स या फिर कोई मॉल हर तरफ लोगों का एक रेला-सा चलता रहता है। नीतू अपने-आप को इस भीड़ में पिछड़ता हुआ महसूस करती है। यहाँ हर कोई उसे दौड़ता हुआ प्रतीत होता है, इस तरह की आपाधापी जीवन से ही आगे निकल जाने की है? सबसे आगे निकल जाने की है? या खुद से आगे निकल जाने की? ...जिंदगी से कदमताल मिले न मिले हर कोई बस वक्त से आगे निकल जाने की होड़ में दिखाई देता है।

विक्रम को तो अब इस मुंबई लाइफ की आदत हो चली है। रोज ऑफिस आते-जाते समय उसे भी तो इसी भीड़ का हिस्सा बनना पड़ता है। तभी तो एक धक्के के साथ वह नीतू का हाथ पकड़कर फेरी-बोट में चढ़ आया, नीतू तो अपनी साड़ी सँभालते-सँभालते उसके पीछे किसी तरह बस घिसटती चली आई थी। लगभग आधा घंटे के सफर के दौरान वे दोनों लहरों की तरगें और बोट पर मँडराते पंछियों के कलरव का आनंद उठाते रहे। बोट के बाद टॉय-ट्रेन की सवारी से एलिफेंटा केव्स तक केवल पंद्रह मिनट ही लगते हैं। इस भयंकर गरमी में भी लोगों का उत्साह देखते ही बन रहा था।

बंदरों को कोल्ड्रिंक पीते देख वक्त के बदलने का आभास होता है किंतु मनुष्यों में अब भी अपने इन पूर्वजों की कई आदतें बाकी बची दिखाई देती है जब वे नियमों को तोड़ कर इस एतिहासिक धरोहरों में यहाँ-वहाँ मूतते-थूकते दिखाई देते हैं। विक्रम और नीतू थककर एक जगह विश्राम करने बैठ जाते है।

लड़कियों की कई टोलियाँ आई हुई हैं, कुछ लड़कियाँ मूर्तियों के साथ उन्हीं की तरह से पोज बनाकर फोटो खिंचवा रही है तो कुछ "पाउट" बनाकर "सेल्फी" ले रही हैं। विक्रम व नीतू उन्हें देखकर मुस्कुरा उठते हैं। रंग-बिरंगे परिधानों में सजी ये लड़कियाँ जैसे कोई तितलियाँ हों जो अपने रंगीन पंख फैलाए इन हवाओं पर सवार होकर यहाँ आ पहुँची थी। चहक-चहक कर सारा वातावरण खुशनुमा बना रही थीं, उनकी खिलखिलाहट सुनकर तो लग रहा था जैसे इन गुफाओं में सदियों से मौन खड़ी ये मूर्तियाँ भी बोल पड़ेगी...। कुछ हैट खरीद रहीं थीं, कुछ चाट खा रही थीं, तो कुछ खुलकर ठहाके लगा रही थीं। अपने अलमस्त अंदाज से सबको अपने साथ हँसने-मुस्कुराने के लिए मजबूर करती-सी ये लड़कियाँ, संसार से अलहदा अपनी ही दुनिया में खुश व मग्न थीं।

कुछ दीवाने लड़कों की टोलियाँ भी थीं जो हर जगह इन लड़कियों का पीछा करती फिर रही थीं। उन लड़कों का गुफा-भ्रमण इन लड़कियों की उपस्थिति से सार्थक हो उठा था उनका रविवार सफल सिद्ध हो रहा था... उन्हें न तो किसी मूर्ति पर अंकित उनके निर्माण काल से मतलब था न इतिहास से गुजरकर वर्तमान तक आते-आते के उनके इस बिगड़े स्वरूप पर ही कोई रंज। अगली गुफा की और जाने के लिए विक्रम की बाँहों का सहारा लेकर खड़ी होते हुए नीतू बड़बड़ा उठती है "पुरुष न जाने कब अपने वजूद को एन्जॉय करना सीखेगा?, देखो कितनी सरलता से ये हाईजैक हो जाते हैं।" अस्थायी संग-साथ के क्षणिक सुख हेतु ये लड़के किस तरह अपना मानसिक संतुलन खो बैठते हैं, इस उम्र में विपरीत आकर्षण का साथ मिलते ही नसों में उन्माद बहने लगता है... क्षणिक आभासी सुख की लालसा में बहकाव की नदी अपने बाँध तोड़कर बहना चाहती है।

विक्रम पूछता है "इसमें किसका कसूर है नीतू? ज्यादातर यह माना जाता है कि पुरुष को उकसाने के पीछे कोई न कोई प्रेरक तत्व निहित होता ही है, लड़कियों का पहनावा, सजना-सँवरना, ये सब अस्थायी आकर्षण की श्रेणी में आतें हैं।"

नीतू ने एक गहरी साँस खींचते हुए जवाब दिया "विज्ञान की दृष्टि से देखा जाए तो किशोरावस्था से यौवन में कदम रखने के साथ ही मनुष्य मात्र में यौनाकांक्षा जन्म लेती है जो किसी के द्वारा उकसाए बिना ही स्वयं को संतुष्ट करने के लिए बेचैन रहती है और लड़कियों की अपेक्षा लड़कों में यह भावना बलवती होती है, उनके मन में मुख्य भाव खुद को संतुष्ट करने का होता है, जाहिर है इसके लिए उन्हें एक स्त्री शरीर की दरकार होती है। लड़कियों के कपड़ों पर आक्षेप करना उचित नहीं। आधुनिक लिबास, जिसमें से लड़कियों का शरीर नजर आए, क्षणिक आवेश उत्पन्न जरूर करता है लेकिन पुरुष यौनाकांक्षा को जगाता नहीं हैं क्योंकि वह तो स्वयं जागृत रहती है। जो इच्छा पहले से ही मौजूद हो उसे उत्पन्न कैसे किया जा सकता है?

विक्रम ने नीतू की बातों पर सहमति जताते हुए कहा - हाँ... हाँ... यह तो एक प्राकृतिक भूख है जो पूरी न होने की स्थिति में विकृत होकर कभी-कभी बलात्कार जैसे जघन्य अपराध का कारण भी बन जाती है। नीतू ने अपनी सोच पर एक अंतिम स्टेटमेंट रखते हुए कहा "माना कि यह एक प्राकृतिक भूख है लेकिन प्राकृतिक भूख में भी सभ्य लोग सभ्य तरीके से खाना पसंद करते हैं और असभ्य लोग अपना पेट भरने के लिए कहीं भी मुँह मार लेते है। दरअसल हमारे समाज में लड़कियों से ज्यादा लड़कों को सभ्यता के संस्कार मिलने जरूरी हैं" सो तो है विक्रम ने कहा और हँसकर पेट पर हाथ फिराता हुआ बोला फिलहाल इस भूख का कुछ करते हैं।"

अंतिम फेरी-बोट से पहले अपने साथ लाए पैक्ड-लंच को खाने के बाद विक्रम ने एक लंबी डकार ली और नीतू की और कृतज्ञता भरी नजरों से देखा जैसे इस लजीज खाने के बदले अपनी अन्नपूर्णा को मौन धन्यवाद दे रहा हो। वापसी में फेरी के ऊपरी फ्लोर पर बीचो-बीच रखे सोफों में से दो पर उन्हें बैठने का स्थान मिल गया था, बाकी बचे सोफों पर वह पर्यटक लड़कियों की टोली दिन भर की थकन के बाद अधलेटी पड़ी थी।

लहरें दिनभर के उफान के बाद अपनी थकान उतार रही थी, वे अब भी बोट से टकरा तो रहीं थी किंतु जैसे किसी ठहराव के दर पर जाकर रुकने के इंतजार में भटकती हुई इधर-उधर हिचकोले खा रही थी। पक्षियों की कलरव में सुबह वाली चंचलता नदारद थी, उनकी यायावरी में एक सुकून भरे ठिकाने को खोजने की उत्सुकता अधिक नजर आ रही थी। वे सभी अपने पंखों को आराम से फैलाकर सो जाने की चाह में सूरज के छिपने से पहले बोट पर बँधी रस्सियों, टायरों और लोहे के बड़े-बड़े खंभों पर लौटकर पनाह ले रहे थे।

विक्रम ने नीतू के उनींदे चेहरे को देखा जहाँ थकावट के चिह्न स्पष्ट नजर आ रहे थे। वह अपने पास बैठी उस सुबह वाली पर्यटक लड़की को बड़े गौर से देख रही थी जो उस वक्त बरमूडे के बाहर निकली अपनी खुली हुई जाँघों पर सनक्रीम मल रही थी और अपनी सहेलियों को अपने पैरों की सूखी हो आई त्वचा दिखा-दिखा कर हँस रही थी, यूँ लग रहा था जैसे वह कुछ ही दूर बैठे लड़कों का ध्यान अपनी ओर आकर्षित करने के लिए ऐसा कर रही हो, लड़कों का यही ग्रुप दिन भर इन लड़कियों के इर्द-गिर्द मँडराता रहा था। उस लड़की की एक सहेली ने इठलाते हुए उससे पुछा "डू यू वीअर सच ड्रेसेज एट होम?" इस प्रश्न के जवाब में उस बरमूडे वाली लड़की ने बिदक कर कहा था "नो वे ...माय फादर वुड किल मी यू नो? एंड इफ माय नानी वुड हेव सीन मी लाइक दिस... वे बेक इन विलेज ...शी वुड डाई ऑफ शॉक।" कुछ ही दूर बैठा एक लड़का मोबाइल से उसकी वीडियो रील उतार रहा था। नीतू के इशारे पर उस लड़की ने अपनी जाँघों को ढकने की नाकामयाब कोशिश की, सुबह ही खरीदे गए बाँस के तिनकों से बुना हैट जरा अड़ियल किस्म का निकला उसने लड़की की कोई मदद नहीं की।

वह लड़के की तरफ देखकर लापरवाही से मुस्कुरा दी। असफल प्रयास की झिझक मिटाने की गरज से उसने सामने बैठी नीतू पर "हू केयर्स" वाला अंदाज फेंका। कुछ देर बाद उसने अपने पर्स में से डेरी-मिल्क की सिल्क-बार निकाली, दिन भर की भयंकर गर्मी झेलती उस सिल्क-बार का पसीना भी छूटने लगा था। नीतू को लगा शायद खिसियाहट में भरकर ही उस लड़की ने अपनी सहेलियों से पुछा था..." वुड यू लाइक टू लाइक इट?" ...और उत्तर की प्रतीक्षा किए बिना ही वह बड़े मजे से उस पिघलती हुई

चाकलेट को नीचे से ऊपर तक चाटने लगी थी। फेरी-बोट के किनारे तक पहुँचते-पहुँचते नीतू यही उत्तर सोच पाई कि समाज रूपी यह भवन अब शायद नींव तक चरमरा कर रह गया है।

किनारे पर पहुँचने से पहले नीतू ने विक्रम की ओर देखा, जहाँ अब भी वही सवाल ताक रहा था कि "कसूर किसका है?"